International Journal of Applied Research 2022; 8(6): 616-618

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2022; 8(6): 616-618
www.allresearchjournal.com
Received: 18-04-2022
Accepted: 25-05-2022

राम नरेश महतो
शोधार्थी, बी.एन. मंडल विश्वविद्यालय, लालू नगर, मधेपुरा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
राम नरेश महतो
शोधार्थी, बी.एन. मंडल विश्वविद्यालय, लालू नगर, मधेपुरा, बिहार, भारत

भारत में पश्चिमी शिक्षा और उसका प्रभाव

राम नरेश महतो

सारांश
शिक्षा के महत्ता से सभी परिचित है। अलस में शिक्षा मनुष्य को पशुक्त जीवन से ऊपर उठानेवाली प्रक्रिया है। जिस तरह से पशुओं को सही या गलत का ज्ञान नहीं होता है उसी तरह की स्थिति अशिक्षित मनुष्यों की होती हैं। वे भी पशुतुल्य ही होते हैं बिना शिक्षा के पर ज्योहीं उन्हें ज्ञान का प्रकाश होता है। त्योंही उनके मस्तिष्क चक्षु खुल जाते हैं। शिक्षा मनुष्य के अंदर अच्छो विचारों को अंकुरित करती है और बुरे विचारों के प्रति विरक्ति पैदा करती हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षा का मूल अर्थ यही है कि वह व्यक्ति का उचित मार्गदर्शन कर उसे बेहतर तरीके से जीवन व्यतीत करे योग्य बनता है। शिक्षित मनुष्य के भीतर समाज में प्रतिष्ठित कार्य करने की प्रेरणा उत्पन्न होती हैं और मनुष्यता-भाव उदित होता है।

कूटशब्द: शिक्षा, मस्तिष्क, ज्ञान, मार्गदर्शन, मनुष्यता-भाव

प्रस्तावना
प्राचीन भारत के लोग भी शिक्षा के महत से परिचित रहे हैं और चूंकि हमारे वेद लिखित रूप में सुनसे प्राचीन है तथा संपूर्ण विश्व के विद्वान भी इस तथ्य से सहमत है कि ऋग्वेद ही मानवीय सभ्यता का पहला लिखित ग्रंथ है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि मौखिक शिक्षा के पश्चात लिपि रूप में लिखित शिक्षण व्यवस्था का प्रस्फुटन सर्व-प्रथम भारतीय-धरा पर ही हुआ है। प्राचनी भारत की शिक्षण व्यवस्था समृद्धशाली रही हैं और अनेक ग्रंथों में इसका विवरण उपलब्ध है। साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि विश्वगुरू का दार्ज भी भारत को अपनी बेहतर शिक्षण-प्रणाली के कारण ही मिला है और यहाँ विश्व के हर हिस्से से लोग शिक्षा ग्रहण करने आते थे। भारत वर्ष में ज्ञान अर्थात शिक्षा को सर्वोच्चता हासिल रही हैं और इस देश में शिक्षा सिर्फ किताबी ज्ञान तक सीमित नहीं थी बल्कि इसका प्रयोग व्यवहारिक जीवन में भी हुआ है। इस बात का सबसे बड़ा प्रमाण है यहाँ की सामाजिक-व्यवस्था का दर्शान पर आधारित होना। शिक्षा से उत्पन्न ज्ञान के आधार पर भारतीय ऋषि-मुनियों ने दर्शन को श्रेष्ठत्तम दर्जा दिया। इसी के आलोक में आचार-विचार, श्रेष्ठ-निम्न आदि मावों का मापदंड निर्धारित हुआ है और धर्मशास्त्र की भी उत्पत्ति हुई है। दर्शन और धर्मशास्त्रों में अनुरूप ही भारतीय सभ्यता उन्नत हुई है। दर्शन तथा धर्म के आधार पर ही यहाँ के समाज में व्यावहारिक उच्चतम दर्जा प्राप्त है और यही वजह है कि यहाँ सामाजिक व्यवस्था पर कई प्रहनचिह्न लगाने के बाद भी समाजशास्त्रियों ने भारतीय समाज के बेहतर मानवीय-मूल्यों पर आधारित करार दिया है। यहाँ के समाज में प्राचीन काल में संस्कृत-शिक्षा-प्रणाली कायम थी। जिसमें वैसे ही ज्ञान को प्राथमिकता मिली है जो व्यवहारिक जीवन में खरा उतरता हो। भारत के विद्वानों ने एक से एक संस्कृत ग्रंथों को वयवहारिक जीवन में परखकर ही रचा है और यही कारण है कि इन ग्रंथों में दर्ज निष्कर्ष वैज्ञानिक कसौटी पर भी खरे उतरते हैं। अस्त यह कहा जा सकता है कि भारतीय समाज में एक वैज्ञानिकपूर्ण शिक्षण-प्रणाली का अस्तित्व प्राचीनतम युग से ही बरकरार रहा है। इस अकाटय तथ्य के परिपेक्ष्य में जब हम प्रस्तुत शोध आलेख के विषय ‘‘भारत में पश्चिमी शिक्षा और उसका प्रभाव’’ पर विचार करते हैं तो सबसे पहला प्रश्न स्वतः कौंध उठता है कि जब एक उन्नत एवं संस्कृत शिक्षण प्रणाली भारत में स्थापित थी ही और यहाँ के ज्ञान-प्रकाश से संपूर्ण विश्व चमत्कृत था, फिर आखिर वो कौन सी परिस्थितियाँ रही जिसके बल पर पाश्चात्य शिक्षण व्यवस्था का प्रस्फुटन भारत में हुआ? इस प्रश्न की तलाश में जब हम ऐतिहासिक पृष्ठों को पलटते हैं तो ज्ञात होता है कि विश्वगुरू और सोने की चिड़िया जैसे नामों से अलंकृत भारत ने निरंतर विदेशी आक्रमणों को अेला है। विदेशी आक्रमणकारियों ने ना सिर्फ भारत के बहुमूल्य संपदाओं को लूटा बल्कि यहाँ के ज्ञान को भी नष्ट करने का प्रयास किया। सत्ता स्थापित कर विदेशी मुगलों ने पूरे भारत में एकदम राज्य किया। मुगलों ने यहाँ के मंदिर-मठों, आश्रमों आदि को तहस-नहस कर दिया। वेदो-पुराणों, ग्रंथों को जला दिया और के विश्व प्रसिद्ध तक्षशिला, नालंदा आदि मांनिद शिक्षण संस्थानों का अस्तित्व ही समाप्त कर दिया। भारत की सभ्यता-संकृति को नष्टकर तैमूखंशी बाबर ने 1526 में इस्लामी साम्राज्य की स्थापना की और इसके वंशजों ने 17 वीं शताब्दी के आखिर और 18वीं शताब्दी की शुरूआत तक शासन किया। मुगल या इस्लामी शासन के इस दौर में भारतीय शिक्षण व्यवस्था को ध्वस्त कर दिया गया।

फिर अरवी-फारसी शिक्षण व्यवस्था को स्थापित करने का प्रयास भी हुआ परंतु भारतीय विद्वानों ने विषम परिस्थितियों में भारतीय शिक्षण व्यवस्था की मशाल को प्रज्पवलित रखा जिसके कारण अरवी-फारसी शिक्षण प्रणाजी का दायरा संकुचित ही रहा। सैन्य-बल पर स्थापित मुगल-साम्राज्य जब कालातंर में कमजोर हुआ तो भारत में पाश्चात्य आक्रमणकारियों का शासन स्थापित हो गया। वैसे तो मुगल साम्राज्य का अंतिम बादशाह बहादुर शाह जफर को माना जाता है परंतु मुगल शासन का पतन औरंगजेव की मृत्यु के साथ ही प्रारंभ हो गया था और स्थायी राजपूत राजाओं के विद्रोह तथा ब्रिटिश साम्राज्य की विचारवादी नीतियों के चलते मुगल साम्राज्य की चूले हिल गई। फिर आसानी से तात्कालीन विश्व की सबसे बड़ी सैन्य शक्ति और आर्थिक माहशक्ति ब्रिटिश साम्राज्य ने भारत को गुलाम बना लिया। यहाँ के सारे प्राकृतिक-अप्राकृतिक संसाधनों को उपयोग पाश्चात्य जगत से शासकों ने अपने हक के लिए किया। नतीजन मुगल शासन में जिस चुके भारतीय अंग्रेजों के हाथ शोषित होने लगे। भारतीयों को संपूर्ण रूपसे गुलाम बनाने के लिए अंग्रेजों ने बची-खुची भारतीय शिक्षण व्यवस्था प्रणजी को भी मिटा दिया। इसके पश्चात पाश्चान्य शिक्ष-प्रणाली का स्थापित किया गया।

पूर्व-ब्रिटिश भारत में शिक्षा– पूर्व-औपनिवेशिक भारत में शिक्षा की विशेषता धार्मिक और जातिगत आधार पर विभाजन था। हिंदुओं में, ब्राह्मणों को उच्च धार्मिक और दार्शनिक ज्ञान प्राप्त करने का विशेष विशेषाधिकार प्राप्त था। उन्होंने शिक्षा प्रणाली पर एकाधिकार जमा लिया और समाज में पदों पर कब्जा कर लिया, मुख्य रूप से पुजारी और शिक्षक के रूप में। *उन्होंने विद्यालयों* और *चतुस्पथिस* जैसे विशेष मदरसों में अध्ययन किया ।शिक्षा का माध्यम संस्कृत था, जिसे पवित्र भाषा माना जाता था। तकनीकी ज्ञान - विशेष रूप से वास्तुकला, धातु विज्ञान, आदि के संबंध में - वंशानुगत रूप से पारित किया गया था। यह नवप्रवर्तन के आड़े आया। इस प्रणाली की एक और कमी यह थी कि इसने महिलाओं, निचली जातियों और अन्य वंचित लोगों को शिक्षा प्राप्त करने से रोक दिया। रटने पर जोर नवप्रवर्तन में एक और बाधा थी।

औपनिवेशिक राज्य का योगदान : मैकाले शिक्षा प्रणाली– औपनिवेशिक सरकार ने भारतीयों को शिक्षित और सशक्त बनाने के बजाय एक अलग कारण से भारत में आधुनिक शिक्षा के प्रसार में सहायता की। भारत जैसे बड़े उपनिवेश का प्रशासन चलाने के लिए, अंग्रेजों को उनके लिए काम करने के लिए बड़ी संख्या में कर्मियों की आवश्यकता थी। इतनी बड़ी संख्या में आवश्यक शिक्षित वर्ग को ब्रिटेन से आयात करना अंग्रेजों के लिए असंभव था। इस उद्देश्य से, 1835 में भारतीय परिषद द्वारा अंग्रेजी शिक्षा अधिनियम पारित किया गया था। टीबी मैकाले ने भारत में शुरू की गई शिक्षा प्रणाली का मसौदा तैयार किया था। परिणामस्वरूप, औपनिवेशिक प्रशासन ने भारत में अंग्रेजी और आधुनिक शिक्षा प्रदान करने वाले स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय शुरू किए। 1857 में बंबई, मद्रास और कलकत्ता में विश्वविद्यालय स्थापित किए गए थे। औपनिवेशिक सरकार को उम्मीद थी कि शिक्षित भारतीयों का यह वर्ग अंग्रेजों के प्रति वफादार रहेगा और ब्रिटिश राज के स्तंभ के रूप में कार्य करेगा।

अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ के लिए एक शिक्षित भारतीय मध्यम वर्ग का निर्माण किया, लेकिन इसे बाबू वर्ग कहकर उपहास किया। हालाँकि, वही वर्ग भारत का प्रगतिशील बुद्धिजीवी बन गया और देश की आज़ादी के लिए लोगों को संगठित करने में अग्रणी भूमिका निभाई।

शिक्षित मध्यम वर्ग की भूमिका– एक तरफ आर्थिक और प्रशासनिक परिवर्तन और दूसरी तरफ पश्चिमी शिक्षा के विकास ने नए सामाजिक वर्गों के विकास के लिए जगह दी। इन सामाजिक वर्गों के भीतर से एक आधुनिक भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग का उदय हुआ। ब्रिटिश राज द्वारा बनाए गए "नव-सामाजिक वर्ग", जिसमें भारतीय व्यापारिक और व्यापारिक समुदाय, जमींदार, साहूकार, शाही अधीनस्थ सेवाओं में कार्यरत अंग्रेजी-शिक्षित भारतीय, वकील और डॉक्टर शामिल थे, ने शुरू में औपनिवेशिक प्रशासन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया। हालाँकि, जल्द ही उन्हें एहसास हुआ कि उनके हित केवल स्वतंत्र भारत में ही बेहतर ढंग से पूरे होंगे। उक्त सामाजिक वर्गों के लोगों ने लोगों के बीच देशभक्ति को बढ़ावा देने में प्रमुख भूमिका निभानी शुरू कर दी।

राजा राम मोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानंद, अरबिंदो घोष, गोपाल कृष्ण गोखले, दादाभाई नौरोजी, फ़िरोज़ शाह मेहता, सुरेंद्र नाथ बनर्जी और आधुनिक भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग के अन्य लोगों ने भारत में सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक आंदोलनों का नेतृत्व किया। शिक्षित भारतीयों को जॉन लॉक, जेम्स स्टुअर्ट मिल, मैज़िनी, गैरीबाल्डी, रूसो, थॉमस पेन, मार्क्स और अन्य पश्चिमी बुद्धिजीवियों द्वारा व्यक्त राष्ट्रवाद, लोकतंत्र, समाजवाद आदि के विचारों का अनुभव था। स्वतंत्र प्रेस का अधिकार, स्वतंत्र भाषण का अधिकार और संघ का अधिकार तीन अंतर्निहित अधिकार थे, जिन्हें उनके यूरोपीय समकक्ष अपने दिल से प्रिय मानते थे, और शिक्षित भारतीय भी उनसे जुड़े रहना चाहते थे। विभिन्न मंच अस्तित्व में आए, जहां लोग मिल सकते थे और अपने हितों को प्रभावित करने वाले मुद्दों पर चर्चा कर सकते थे।

मिशनरियों का योगदान– भारतीयों के बीच आधुनिक शिक्षा प्रदान करने की सबसे पहली पहल ईसाई मिशनरियों द्वारा की गई थी। धर्मांतरण की भावना से प्रेरित होकर, उन्होंने हिंदुओं में प्रचलित बहुदेववाद और जातिगत असमानताओं पर हमला किया। ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए मिशनरियों द्वारा अपनाए गए तरीकों में से एक आधुनिक धर्मनिरपेक्ष शिक्षा थी। उन्होंने वंचितों और हाशिए पर रहने वाले वर्गों को शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्रदान किए, जिन्हें पारंपरिक शिक्षा प्रणाली में सीखने के अवसरों से वंचित किया गया था। हालाँकि, केवल एक बहुत छोटा सा हिस्सा ही ईसाई धर्म में परिवर्तित हुआ। लेकिन ईसाई धर्म द्वारा उत्पन्न चुनौती ने विभिन्न सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलनों को जन्म दिया।

ऐतिहासिक अध्यनों ज्ञात होता है कि भारत में आधुनिक व पाश्चात्य शिक्षा की शुरूआत ब्रिटिश ईस्ट-इंडिया कंपनी के शासनकाल में ही हुआ। ब्रिटिश शासन कालखंड में शिक्षण संस्थानों की स्थापना का प्रयास सर्वप्रथम ''बंगाल के गर्वनर जनरल बाटेन हेस्टिंग्स के द्वारा 1781ई0 में फारसी एंव अरबी भाषा के अध्ययन के लिए कोलकात्ता में मदरसा खोलकर किया गया।'' चूंकि मुगल शासन के दौरान भारत में फारसी एवं अरबी शिक्षण-प्रणाली उन्नत अवस्था को प्रात्कर चुकी थी। इसलिए जन अंग्रेजों ने अपनी पाश्चात्य शिक्षा की आड़ में ईसाई मिशनरियों के उद्देश्य की पूर्ति का लक्ष्य निर्धारित किया तो उन्होंने फारसी एवं अरबी शिक्षण संस्थानों के माध्यम से ही भारत के प्रबुद्ध-शिक्षित लोगों में पैठ बनाने का प्रयास किया।

पाश्चात्य शिक्षा के अन्यतम गुण-भारत में पाश्चातय शिक्षा को प्राच्यवादी शिक्षा का विकल्प बनाने की अंग्रेजी सरकार की नीति कारगर सावित हुई। चुंकि अंग्रेजी शिक्षा का जुड़ाव नौकरी से कर दिया गया था। इसलिए सरकारी नौकरी पाने के इच्छुक लोग पाश्चातय शिक्षा को तेजी ग्रहण करने लगे। भारत में क्रमबद्ध स्कूलों को व्यावसायिक और सरकारी व्यवस्था दोनों ही प्रणालियों का चक्षण बद्ध विकास, सभी शिक्षा, सुयोग्य शिक्षकों के चयन आदि प्रक्रिया का जन्म भी पाश्चात्य शिक्षा नीति के विकास से ही हुआ है। भारतीय विद्यालय में पुस्तकालय, विज्ञान प्रयोगशाला, खेलकूद, व्यायाम आदि की गतिविधयाँ भी बढ़ी और भारतीय बच्चे भी इन क्षेत्रों में योगदान देने लगे।

निष्कर्ष

वस्तुतः ब्रिटिश सरकार के लोगों ने भारत में पाश्चात्य शिक्षा को इसलिए बढ़ावा दिया कि भारतीय मूल के लोग यूरोपीय साहित्य को समझों आौर ब्रिटिश हुकूमत के उस स्वर्णिम सच से अवगत हो कि उनके शासन क्षेत्र में सूर्य नहीं डूबता। अर्थात इंग्लैड को शासन तंत्र भारत के मानवीय-बल का इस्तेमाल भी अपने हक में करने का इच्छुक था। संभवतः यी करण था कि ईस्ट इंडिया कंपनी ने शिक्षा के क्षेत्र में धन निवेश को बढ़ावा दिया और भारत में पाश्चात्य शिक्षा नीति तेजी से परवान चढ़ने लगी।

संदर्भ

1. शर्मा, योगेंद्र कुमार, मधुलिका शर्मा (2009), शिक्षा के दार्शनिक आधार, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली
2. शीलू मैरी (डॉ) (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य, रजत प्रकाशन नई दिल्ली
3. शुक्ला (डॉ) सी. एस. (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
4. सक्सेना (डा.) सरोज, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशनः आगरा।
5. सक्सेना एन. आर. स्वरूप व पाण्डेय (डॉ) के.पी., (1993-94) शिक्षा सिद्धांत, मेरठ, आर. लाल. बुक डिपो।
6. सक्सेना, एन. आर व चतुर्वेदी स्वरूप शिखा (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।
7. सलैक्स (डॉ) शीलू मैरी (2008) शिक्षक के सामाजिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्षय, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।